# PALLAVA'S CULTURAL CONTRIBUTION

दक्षिण भारत के इतिहास में पल्लव शासकों ने एक विजेता व साम्राज्य-निर्माता होने के साथ-साथ साहित्य, धर्म एवं कला के उत्थान एवं संरक्षण में अविस्मरणीय योगदान दिया है। इनके शासन में कलात्मक गतिविधियों का केन्द्र उत्तर-मध्य भारत के स्थान पर दक्षिण-भारत हो गया जिसके उदाहरण हमें महाबलिपुरम् काँचीपुरम से लेकर तंजौर और पुडुकोट्टई तक मिलते हैं।

यह ध्यान रखने योग्य है कि दीर्घकालीन सत्ता संघर्ष और जय-पराजय के निरंतर क्रम में उलझे रहने के बावजूद पल्लव शासकों ने कला व वास्तुकला के उत्थान में रुचि प्रदर्शित की। इसका कारण शायद वह ठोस आर्थिक समृद्धि थी, जिसका विवरण तत्कालीन साहित्यिक-पुरातात्विक साक्ष्यों से मिलता है। ह्वेनत्सांग लिखता है कि - "देश की भूमि उर्वर थी लोग नियत समय पर खेतों को जोतते हैं जिससे प्रचुर अन्न उत्पन्न होता है।"

पल्लव शासकों ने साहित्यिक विकास को पूर्ण रूपेण प्रोत्साहित किया। इन्होंने 'संस्कृत' को राजभाषा की दर्जा प्रदान की एवं इसके विकास में अपना अमूल्य योगदान दिया। दंडिन तथा भारवि जैसे प्रख्यात संस्कृतज्ञ इनकी दरबार की शोभा थे। महेन्द्रवर्मन I (मत्तविलास प्रहसन, गुणभर, विचित्रचित्र-रचनाएँ) नरसिंहवर्मन II, परमेश्वरवर्मन I ने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। संस्कृत के अतिरिक्त तमिल भाषा एवं साहित्य को भी इस काल में संरक्षण मिला। इसके विकास में अलवारों, नयनारों, बौद्धों एवं जैनों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। लोकजीवन से जुड़ी तमिल रचनाएँ शिलप्पदिगारम् (इलांगो आदीगल-रचनाकार) तथा मणिमेखलै (सीतलै सत्तनार-रचनाकार) जैसे महाकाव्यों की रचना हुई जिनसे दक्षिण भारत में रामायण एवं महाभारत को दर्जा मिला।

पल्लव शासकों ने 'घटिकाओं' के माध्यम से शिक्षा को बढ़ावा दिया। इस काल में 'कांची घटिका' को नालंदा विश्वविद्यालय के समान ख्याति प्राप्त थी। यहाँ संस्कृत साहित्य, प्राचीन धार्मिक ग्रंथों एवं वेदों का अध्ययन होता था। इन घटिकाओं पर ब्राह्मणों का प्रभाव अधिक था।

पल्लव शासक वैदिक धर्मावलम्बी थे लेकिन राज्यनीति में उन्होंने कट्टरता नहीं बरती। पल्लवों के काल

Scanned with CamScanner

में ही अलवारों एवं नयनारों का उदय हुआ जिन्होंने भक्ति को प्रसारित-प्रचारित किया। प्रसिद्ध नयनार संत अप्पार ने महेन्द्रवर्मन को शैवमत में दीक्षित किया था। इसके अतिरिक्त इस काल में बौद्ध एवं जैन मतों का भी अच्छा प्रभाव था। ह्वेनसांग के अनुसार उस समय अकेले कांची में 100 बौद्ध विहार तथा 80 जैन मंदिर थे।

पल्लव शासनकाल में वास्तुकला के क्षेत्र में अभूतपूर्व विकास हुआ। मंदिरों एवं मूर्ति निर्माण के क्षेत्र में इनकी विशिष्ट देन रही। पहाड़ी चट्टानों को काटकर इन्होंने मंदिर निर्मित किये साथ ही पाषाण एवं ईंटों के भी देवालय बनाये गये जो अपनी कलात्मकता एवं शैली के लिए आज भी प्रसिद्ध हैं। इन्होंने 'द्रविड़ शैली' को अपनाया। पल्लवकालीन शासकों ने वास्तुकला को काष्ठकला एवं कंदराकला के प्रभाव से धीरे-2 मुक्त करने का प्रयास किया। पल्लवकालीन वास्तुकला के उदाहरण कांजीवरम्, महाबलिपुरम् के अतिरिक्त तंजौर प्रदेश तथा पुडुक्कोटाई में देखने को मिलता है।

प्रसिद्ध कलाविद् 'आनन्द कुमार स्वामी' पल्लव वास्तुशैली को विकासक्रम की दृष्टि से चार शैलियों में बाँटा है-

(1) महेन्द्रवर्मन शैली (610 AD - 640 AD)
(2) मामल्ल शैली (640 A.D. - 690 A.D.)
(3) राजसिंह शैली (690 A.D. - 800 A.D.)
(4) नन्दीवर्मन या अपराजित शैली - नवीं सदी

दूसरी ओर "पर्सी ब्राउन" सम्पूर्ण पल्लववास्तुकला को दो वर्गों में विभाजित करते हैं। प्रथम वर्ग में "पूर्णतया पार्वत्य वास्तुनिर्माण" है जिसमें महेन्द्रवर्मन एवं मामल्ल शैलियाँ आती हैं। दूसरी श्रेणी में भूमिवंशीय वास्तुकृतियों को रखा गया है।

"महेन्द्रवर्मन शैली" में एकाश्म मंदिरों पर जोर रहा। चट्टान काटकर बनाई गई गुफा को "मंडप" कहते हैं। इन मंडपों में सामान्यतया एक स्तम्भयुक्त बरामदा और अंदर की ओर एक या दो कमरे बनाये गये हैं। शुरू के स्तम्भों की ऊँचाई 7 फीट के आसपास है लेकिन आगे इनकी ऊँचाई बढ़ गयी। स्तम्भ सामान्यतया चौकोर और मध्य में अष्टफलकीय हैं जिनके शीर्षपर सिंह की आकृति है। ये स्तम्भ सादे और अलंकरण विहीन हैं। महाबलिपुरम की आदिवराह गुफा में रखे गये महेन्द्रवर्मन एवं उसके दो रानियों के चित्र अद्वितीय सुंदरता के नमूने हैं। इस काल

Scanned with CamScanner

के मुख्य मंदिर है- भैरवकोंड का मंदिर और नुंदवल्लि का अनंतशयन मंदिर।

"मामल्ल शैली" का विकास नरसिंह वर्मन प्रथम के काल में हुआ। इस काल में दो प्रकार के स्मारक बने - मंडप तथा रथ जिनके उदाहरण मामल्लपुरम (महाबलिपुरम) में मिलते है। यहाँ मुख्य पर्वत पर दस मंडप बनाये गये है। इसमें आदिवराह, महिषमर्दिनी, पंचपांडव आदि काफी प्रसिद्ध है। आकार-प्रकार में तो ये बड़े नहीं है लेकिन इनके स्तम्भ अपेक्षाकृत ऊँचे है और इनपर अलंकरण भी है। ये मंडप अपनी मूर्तिकारी के लिए भी प्रसिद्ध है। इनमे उत्कीर्ण महिषमर्दिनी, अनन्तशायी विष्णु त्रिविक्रम, ब्रह्मा, गजलक्ष्मी हरिहर आदि की मूर्तियाँ कलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट है। पंचपांडव गुफा में दो आकर्षक कृतियाँ है- एक में श्रीकृष्ण को गोवर्धन पर्वत उठाये दिखाया गया है और दूसरे में इनको गायों को दुहते हुए दिखाया गया है।

मामल्ल शैली की दूसरी विशेषता "रथ" मंदिर है जिन्हे कठोर चट्टान (स्थान) को काटकर बनाया गया है। रथ मंदिरों का आकार-प्रकार अन्य कृतियों की अपेक्षा छोटा है। ये अधिक से अधिक 42'×35'×40' के है तथा पूर्ववर्ती बुद्ध विहारों तथा चैत्यों की अनुकृति प्रतीत होते है। रथो मे "धर्मराज रथ" सबसे ऊँची कलाकृति है जिसमें स्वयं महामल्ल का चित्र भी है। "द्रोपदी रथ" सबसे छोटी है लेकिन उसकी सुंदरता अवर्णनीय है। इसमें केवल एक पर्णशाला है जिसके छत पर छप्पर की प्रतिकृति उतार दी गई है। अन्य रथ है - नकुल-सहदेव रथ, अर्जुन रथ, भीम रथ, गजेश रथ, पिडारी रथ तथा वलैयकुट्टै रथ। ये रथ "सप्त पैगोडा" के नाम से विख्यात है जिनकी कुल संख्या आठ है। प्रथम पाँच दक्षिण में तथा अंतिम तीन उत्तर-पश्चिम में स्थित है। ये सभी रथ शैव मंदिर प्रतीत होते है।

मामल्लशैली के रथ अपनी मूर्तिकला के लिए भी प्रसिद्ध है। नकुल-सहदेव रथ के अतिरिक्त अन्य सभी रथों पर विभिन्न देवी-देवताओं जैसे- दुर्गा, इंद्र, शिव, गंगा, पार्वती, हरिहर, ब्रह्मा, स्कंद आदि की मूर्तियाँ उत्कीर्ण मिलती है। द्रोपदी रथ की दीवारों में दुर्गा और अर्जुन रथ की दीवारों में बनी शिव की मूर्तियाँ अधिक प्रसिद्ध है।

एकाश्म गुहा मंदिरो के अलावा इस काल में एक और प्रकार के स्मारक बनाये गये जिन्हे खुले स्थानों पर

एकाश्म - Monolith

चट्टानों की खुदाई और नक्काशी करके बनाया जाता था। ये "तीर्थम" कहलाये। भगीरथ गुफा और उनके अगल-बगल दो चट्टानों पर देवी-देवताओं की आकृतियाँ अत्यंत आकर्षक है।

"राजसिंह शैली" के नाम से ज्ञात तीसरी शैली का विकास पल्लव नरेश 'नरसिंह वर्मन II राजसिंह' ने किया। इस काल में चट्टान काटकर मंदिर बनाने की कला के स्थान पर ईंट एवं पत्थरों के चिनाई वाले मंदिर बनने लगे। इनमें महाबलिपुरम का शोर मंदिर, कांचीपुरम स्थित कैलाशनाथ मंदिर तथा वैकुंठ-पेरूमल मंदिर प्रमुख है। इस शैली में निर्मित मंदिरों के स्तम्भ पतले, सजा मंडप स्तम्भयुक्त तथा विमान एवं मंडप के बीच का हिस्सा अलंकृत है। आंगन आयताकार और परकोटायुक्त है तथा इनमें प्रदक्षिणापथ भी है।

कांची स्थित "कैलाशनाथ मंदिर" इस शैली का उत्कृष्ट नमूना है। इस मंदिर के तीन अलग-2 हिस्से है। एक में नीचे मंदिर है, ऊपर पिरामीडनुमा मीनार है, दूसरे में मंडप बना है तीसरे आयताकार बरामदे में छोटे-2 मंदिर बने है। इस प्रकार इसमें पल्लवकला की तीनों विशेषताएँ एक साथ दिख जाती है। इसके निर्माण में ग्रेनाइट और बलुआ पत्थर का प्रयोग हुआ है। मंदिर में शैव-सम्प्रदाय और शिव-लीलाओं से संबंधित अनेक सुंदर मूर्तियाँ अंकित है जो उसकी शोभा को बढ़ाती है।

इसी तरह कांची के बैकुंठ पेरूमल मंदिर के भीतरी दीवारों पर युद्ध, राज्याभिषेक, अश्वमेध यज्ञ, उत्तराधिकार चयन, नगर जीवन आदि दृश्यों को अत्यंत सजीवता एवं कलात्मकता के साथ उकेरा गया है। ये विविधचित्र 'रिलीफ स्थापत्य' के सुंदर उदाहरण है।

चौथी एवं अंतिम शैली 'अपराजित शैली' थी जिसका विकास 'नंदीवर्मन' के समय में हुआ। इस शैली में नवीनता नहीं है, केवल स्तम्भों को अधिक अलंकृत बनाया गया है। इस काल में बने मंदिर आकार में छोटे है एवं पूर्ववर्ती मंदिरों के प्रतिकृति मात्र है। मुख्य मंदिर है- कांचीपुरम का मुक्तेश्वर तथा मातंगेश्वर मंदिर तथा गुडीमल्लम का परशु-रामेश्वर मंदिर। मंदिरों में ओज का अभाव है जो इस बात का परिचायक है कि बाह्य आक्रमण के कारण शासकों की शक्ति क्षीण हो रही थी। इसी समय चोल सत्ता का अभ्युदय हो रहा था जिनकी कला शैली पर पल्लवों की शैली का स्पष्ट प्रभाव दिखता है।

Scanned with CamScanner

पल्लवों की स्थापत्य कला पर गुप्तकला और मूर्तिकला पर बौद्धों की कला का प्रभाव दिखाने की प्रवृत्ति रही है लेकिन कायदे से देखने पर स्पष्ट है कि उसे उत्तर भारत का नकल मात्र नहीं कहा जा सकता। पल्लव कला वस्तुतः मौलिक रूप से विकसित होकर स्वतंत्र द्रविड़ शैली का विकास करती है। इसने न केवल दक्षिण भारतीय प्रायद्वीप में अपनी प्रमाणिकता स्थापित की वरन् सुदूरपूर्व के भारतीय उपनिवेशों की स्थापत्य कला को प्रोत्साहित किया। विशिष्ट पल्लव अथवा द्रविड़ शिखर शैली जावा, कम्बोडिया तथा कियतनाम के मंदिरों में भी पाई जाती है। पल्लव काल की विभिन्न उपलब्धियां आज भी पूरे शान के साथ हमारे बीच मौजूद है।

—X—

Scanned with CamScanner